छीपा समाज का गौरवपूर्ण इतिहास

वर्ण व्यवस्था एवं जाति व्यवस्था भारत की पुरानी सामाजिक संस्थाएं हैं |वर्ण व्यवस्था हमारे प्राचीन ऋषियों ,मुनियों की देन है |श्रीमद्भगवतगीता में भगवान कृष्ण ने वर्ण व्यवस्था को कर्म एवं गुण के आधार पर उसकी रचना का उल्लेख किया है -

चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः ।

तस्य कर्तारमपि मां विद्ध्यकर्तारमव्ययम् ॥ गीता॥४-१३॥

ब्राम्हणक्षत्रियविन्षा शुद्राणम च परंतप।

कर्माणि प्रविभक्तानि स्वभावप्रभवैर्गुणे: ॥ गीता॥१८-४१॥

अर्थात ब्राह्मण, क्षत्रिय , वैश्य एवं शूद्र का विभाजन व्यक्ति के कर्म और गुणों के हिसाब से होता है, न कि जन्म के | गीता में भगवन श्री कृष्ण ने और अधिक स्पष्ट करते हुए लिखा है कि वर्णों की व्यवस्था जन्म के आधार पर नहीं, कर्म के आधार पर होती है. लेकिन धीरे-धीरे यह व्यवस्था लोप हो गयी और जन्म से वर्ण व्यवस्था आ गयी|प्रत्येक वर्ण में अनेक जाति -उपजाति बन गयी और सामाजिक व्यवस्था में काफी जटिलताएँ उत्पन्न हो गयी |हम मूलतः क्षत्रिय थे| रंगाई ,छपाई ,सिलाई एवं बंधाई (बंधेज) हमारा कर्म था, परंतु जन्म के आधार पर जाति बन जाने से हम छीपा ,दर्जी ,रँगारा एवं बंधारा जाति के हो गए |इसके आगे छीपाओं में भी गहलोत छीपा ,टांक छीपा ,भावसार छीपा ,दिलवारी छीपा ,रँगारा छीपा ,वैष्णव छीपा ,मुस्लिम छीपा ,सिंधी छीपा ,छिम्बा हो गए |दर्जियों में टाक दर्जी ,शिंपी,रोहिल्ला टांक दर्जी ,मेरु ,छिपोलु ,पीपावंशी दर्जी , काकुत्स्थ दर्जी छीपा हो गए | मूल रूप से क्षत्रिय होने के कारण परंतु अभी क्षत्रिय कर्म नहीं होने के बावजूद भी नाम के साथ राजपूत और ठाकुर लगाने का मोह नहीं छूटा |जाति व्यवस्था की जटिलता के कारण आपस में एक दूसरे को नीचा समझने लगे ,रोटी-बेटी के मतभेद बढ़ते गए | एक दूसरे से दूर होते गए तथा यह विशाल वट वृक्ष कई शाखाओं में विभाजित हो गया |स्वतंत्रता प्राप्ति के 72 वर्ष बाद भी देश में राजनीतिक दबाव समूह नहीं बन पाये |

छीपा एवं छपाई -

हमारे प्राचीन ग्रंथों में चित्रलेखा, चित्रांगदा, रंगशाला, आदि शब्दों का प्रयोग यह सूचित करता है कि अलंकारिता की दृष्टि से रंगों का प्रयोग भारत में अत्यंत पुराना है। वस्त्र की बुनाई करते समय रंगीन सूत द्वारा नाना प्रकार के रंगबिरंगे चित्र बनाए जाते थे। इसके उपरांत उसे छपाई द्वारा रंगबिरंगे चित्रों से सँवारा जाता था। प्लिनी (Pliny) के अनुसार "रंगाई छपाई" का जन्म भारत से होकर मिस्र आदि देशों में ईसा पूर्व प्रसारित हो चुका था। **"छीपा"** शब्द का इतिहास उतना ही पुराना है जितनी रंगाई ,छपाई ,चुंदरी , बंधेज आदि का व्यवसाय | छपाई का संबंध सिंधु घाटी की

सभ्यता से ही पाया गया है| जब से छपाई तथा छपे हुए कपड़े के व्यापार का धंधा हमारी जाति ने अपने हाथ में लिया तब से वह समस्त भारतवर्ष में फला-फूला और विकसित हुआ है | यहां तक कि प्राचीन काल में छपा हुआ कपड़ा बड़ी ऊंची कीमतों पर भारतवर्ष से बाहर दूसरे देशों को भी भेजा जाता था| यही कारण है कि कपड़े की छपाई तथा उसके व्यापार से संबंधित जाति के रूप में हमें प्राचीन एवं मध्यकाल तक प्राय: सभी राज्यों, गणराज्यों , तथा बस्तियों में जाना गया तथा हमें आदर सम्मान के साथ बसाया गया |हम ऊंची सामाजिक स्थिति ,आर्थिक समृद्धि तथा सांस्कृतिक विशेषताओं के कारण अनेक स्थानो पर हमारे गण(रिपब्लिक) स्थापित हो गए तथा हमारी पृथक किंतु मान्य व्यापारिक श्रेणियां बन गई| छपाई कला से जुड़े हुए हम लोग सेठ ,महाजन, भक्तजन इत्यादि के रूप में जाने गए| **वस्तुतः, छीपा जाति के शानदार अतीत, आर्थिक वैभव तथा सामाजिक प्रतिष्ठा के विषय में व्यापक अध्ययन ,शोध तथा ऐतिहासिक खोज किये जाने की आज की आवश्यकता है** |यह कठिन कार्य है क्योंकि राजनीतिक उथल-पुथल, भारत में मुगलों के शासन,उच्च जातियों की अहमन्यता,औध्योगिक क्रांति के कारण मशीनों का आगमन आदि कारणो से उक्त कला, व्यवसाय तथा व्यापार में निरंतर गिरावट होती गयी | इस विषय में सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात यह भी है कि छपाई तथा छपे वस्त्रों का व्यापार,हमारा धंधा अथवा आजीविका का माध्यम था ,हमारा कर्म था, न कि वर्ण अथवा जाति का ध्योतक | हम मूलतः क्षत्रिय थे तथा शासन करते थे, जिन्होंने कालांतर में वैश्य वृत्ति को आजीविका(कर्म) के रूप में ,भगवत भक्ति को धर्म एवं आस्था के रूप में अपना लिया| वर्णाश्रम प्रथा से बंधे हुए होने के कारण हम लोग उसी व्यवस्था को अपनाते रहे| आज भी हम उसी सनातन वैष्णव धर्म का भक्ति भाव के साथ पालन कर रहे हैं|

क्षत्रिय वर्ण परिवर्तन का पौराणिक आख्यान

इस वर्ण(जाति) परिवर्तन का आख्यान यह है कि हम हैयय वंश के सहस्त्रबाहु महाराज के परिवार से निकले हैं| महाराजा सहस्त्रबाहु की पत्नी रानी सत्यवती एवं जमदग्नि ऋषि की पत्नी रेणुका सगी बहने थी| एक समय महाराज सहस्त्रबाहु ने सपत्नीक सेना सहित दक्षिण दिशा में महिष्मति नदी के किनारे विश्राम के लिए पड़ाव डाला| वहां पर जमदग्नि ऋषि का आश्रम था| संयोगवश नदी के तट पर सत्यवती और रेणुका का मिलन हो गया| वार्तालाप में रानी सत्यवती ने अपनी बड़ीबहन रेणुका से अभिमान भरे शब्दों में कह दिया कि **"काश ,आप एक राजा की रानी होती तो आज मुझे सेना सहित आदर सत्कार देकर कृतार्थ करती"**| इस बात से रेणुका के मन में ग्लानि हुई| वह उदास मन से आश्रम में चली गई| महर्षि जमदग्नि परम ज्ञानी थे| रेणुका के चेहरे पर छाई उदासी देखकर उन्होंने सारा वृत्तांत जान लिया| उसकी व्यथा को दूर करने के लिए महर्षि जमदग्नि इंद्र के पास गये तथा कुछ समय के लिए कामधेनु तथा कुबेर का भंडार मांग लाये ताकि सेना सहित अतिथियों का सत्कार किया जा सके| उनके सहारे महर्षि ने महाराजा

सहस्त्रबाहु, सत्यवती तथा सेना समेत सभी का शानदार ढंग से आतिथ्य सत्कार किया, जिसे देख कर सभी आश्चर्य में पड़ गए,किंतु महाराजा सहस्त्रबाहु को उस कामधेनु को प्राप्त करने का लोभ हो गया, जिसके कारण ही तपोवन में इतने लोगों का राजसी सत्कार संभव हुआ| उन्होंने महर्षि जमदग्नि से कामधेनु मांगी,किंतु वह तो तपस्या के फल से इंद्र से कुछ समय के लिए मांगी हुई वस्तु थी| अत: महर्षि जमदग्नि ने यह वस्तु सहस्त्रबाहु को देने में असमर्थता व्यक्त कर दी|

कामधेनु नहीं देने पर क्रोधांधवश महाराज सहस्त्रबाहु महर्षि जमदग्नि का सिर धड़ से अलग कर कामधेनु लेकर चले गए| अहंकार, लोभ तथा किन्ही के बहकावे में आकर यह घृणित कार्य किया गया| इस प्रकार पति के मारे जाने पर दारुण विलाप को सुनकर जमदग्नि ऋषि के पुत्र महाप्रतापी परशुराम हिमालय तपस्यारत स्थिति से उठकर तत्काल माता रेणुका के समक्ष प्रकट हो गए, अपनी योग माया से समस्त प्रकरण को समझ कर अपनी माता के समक्ष प्रण किया कि मैं सहस्त्रबाहु के क्षत्रिय वंश का ही नाश कर दूंगा| भगवान परशुराम जी ने यही किया| जब महाराज सहस्त्रबाहु का सेना सहित संहार हो गया, उस समय उनके 5 पुत्र शूरसेन, कृष्णादित्यसेन,कमलादित्य , भृगुदत्त एवं सत्यजीत शेष रहे थे| उस समय उन्होंने माता लाच्छी (हिंगलाज / जगदंबा) के मंदिर में जाकर शरण ली ,लेकिन परशुराम जी वहां पर भी पहुंच गए और महाराज शूरसेन को युद्ध के लिए ललकारा| प्राण रक्षा हेतु शूरसेन जी विनययुक्त शब्दों में बोले कि महाराज परशुराम जी आप ब्राह्मण है तथा हम क्षत्रिय | हमारे लिए आप से युद्ध करना उचित नहीं है |इस पर परशुराम जी को अपने ब्राह्मण एवं तपस्वी होने का ध्यान आ गया| उन्होंने माता लाच्छी के शरणागत पांचों भाइयों को प्राणदान करते हुए यह वचन ले लिया कि वे अब क्षात्र- धर्म त्याग देंगे और भविष्य में वैश्य, वाणिज्य एवं शिल्प कर्म ही करेंगे तथा भगवत भजन में लीन रहते हुए वैष्णव धर्म का पालन करेंगे| इस प्रकार हमारी जाति क्षत्रीय से वैश्य एवं भक्ति मार्गी बन गई| उन पांचों भाइयों की संतानों ने अपने वचन के अनुसार वैश्य कर्म एवं भक्ति धर्म अपनाया और उन्होने आज तक नहीं बदला|

माता लाच्छी(हिंगलाज/ जगदंबा) ने शूरसेन व अन्य सभी भाइयों को आदेश दिया कि अपनी आजीविका के लिए वस्त्रों की रंगाई छपाई तथा उनके व्यापार को अपनाते हुए भक्तिमार्गी सनातन वैष्णव धर्म को अपनाओ| यह आदेश देखकर माता अंतर्ध्यान हो गई|

हमारी खाँप गोहिल/गहलोत/गोला छीपा :

स्वैच्छिक कर्म एवं भक्ति अपनाने के साथ ही गोत्रों की समस्या उत्पन्न हो गयी | प्रारंभिक वंशों एवं गोत्रों को स्थान, गांव, क्षेत्र के आधार पर निर्धारित किया गया| क्षात्र धर्म एवं राज्य शासन का परित्याग करने के पश्चात शूरसेनजी गढ़गाँव- गुहलाणा में निवास करने लगे तथा नवीन वैश्य

वृति में रंगे -छपे वस्त्रों को तैयार करना ,कराना,उनका व्यापार करना तथा वैष्णव धर्म अपना लिया| **हम लोग प्रत्यक्ष तौर पर शूरसेन जी महाराज के वंशज हैं और गोहिल, गुहिल, गहलोत या ढूंढारीभाषा में गोला छीपा खाँप, हैहय वंशी क्षत्रिय (सहस्त्रबाहु हैहय वंश से थे) आदि नामों से जाने जाते हैं |हमारे समाज के भाट स्व.श्री रामेश्वर भट्ट ने संवत 2022 चैत्र सुदी 2 को गोहिल क्षत्रिय वंश उत्पति गोत्रावली प्रकाशित की है जिसमें 400 से अधिक अपनी खाँप के गोत्र है |** शूरसेनजी के अन्य चार भाइयों से निकली खापें, वंश, जाति ,गोत्र भी प्रजातीय दृष्टि से एक ही हैं, यद्यपि खान पान, काम धंधे, व्यवहार आदि की दृष्टि कुछ भिन्नता भी हो सकती हैं |

वृहत छीपा समाज :

जब महाराज सहस्त्रबाहु का सेना सहित संहार हो गया, उस समय उनके 5 पुत्र शूरसेन, कृष्णादित्यसेन,कमलादित्य , भृगुदत्त एवं सत्यजीत शेष रहे थे|इन पांचों पुत्रों से आगे बढ़े वंश को पाँच खांपों के रूप में जाना जाने लगा जो निम्न है -

1. गोहिल, गुहिल , गोला या गहलोत छीपा

शूरसेन जी ने गढ़गांव- गुहलाणा में निवास किया तथा यहीं से इस खाँप का प्रचलन हुआ| यहीं से सर्वप्रथम रंगाई छपाई का उद्योग प्रारंभ हुआ तथा रंगे - छपे वस्त्रों का व्यापार किया गया|

2. टांक छीपा एवं दर्जी:

कृष्णादित्यसेनजी कपड़ों की दर्ज(वस्त्रों को तहशुदा) काटते थे| वे गाँव टंकाणी में निवास करते थे व सिलाई का कार्य करते थे ,इससे वे टाक दर्जी कहलाए ,कई छपाई तथा व्यापार करते थे अतः टांक छीपा कहलाए| टांक दर्जी या टांक छीपा कृष्णादित्यसेन महाराज के वंशज हैं |

3. भावसार छीपा:

कमलादित्य महाराज ने भावनगर(गुजरात)में निवास किया तथा उनके वंश की खांप भावसार छीपा के नाम से विख्यात हुई | यह भी वस्त्रों की रंगाई छपाई के साथ बंधेज का काम भी करते हैं|

4. दिलवारी छीपा:

भृगदत्त जी के एक पुत्र बड़े पराक्रमी थे जिनका नाम दिलीप था| इनके वंशज कालांतर में दिलवारी छीपा कहलाए| इनका भी रंगाई छपाई तथा व्यापार का कार्य था|

5. रंगारा छीपा:

सत्यजीत महाराज रंगाई के कार्य में बड़े प्रवीण थे तथा बंधेज का कार्य भी बड़ी प्रवीणता से करते थे| अतः कालांतर में वे रंगारा,बंधारा छीपा के नाम से विख्यात हुए|आजकल अधिकांश रंगारा छीपा महाराष्ट्र के नागपुर,चन्द्रपुर ,अमरावती ,मोवाड़ ,बरोड आदि स्थानों पर निवास करते हैं, परंतु बहुत कम लोग रंगाई के कार्य से जुड़े हैं |

अतः स्पष्ट है कि पांचों खापें पांचों सगे भाइयों से ही प्रारंभ हुई और सभी ने ही क्षत्रिय वर्ण त्याग कर वैश्यवर्ण तथा वैश्यकर्म अपना लिया था| इसलिए आज पांचो खांपो का समाज "वृहत छीपा समाज" है| चाहे वर्तमान समय में कोई भी उद्योग धंधा, व्यापार-व्यवसाय, नौकरी आदि क्यों न करते हो अथवा अपने नाम के आगे कुछ भी क्यों नहीं लगाते हो, छपाई तथा छपे हुए वस्तुओं का व्यापार नहीं करने पर भी वे माता लाच्छी(हिंगलाज,जगदंबा) के आदेश तथा भगवान परशुराम को हमारे द्वारा दिए गए वचन के अनुसार वैश्यकर्म, वैश्यवर्ण के अंतर्गत ही माने जाएंगे| आचरण ,व्यवहार , खानपान, विचारधारा आदि सभी दृष्टि से हम वैश्यों के समान है| वैश्य वर्ण-कर्म रंगाई छपाई, व्यापार के अतिरिक्त हिंदू धर्म के अंतर्गत सनातन- वैष्णव धर्म एवं भगवतभक्ति की धारा भी हमारी जाति के लोगों में निरंतर बहती रही है| कंठी , माला, तिलक, मंदिर, यज्ञोपवित, भगवान राम,पांडुरंग, विट्ठल, श्री कृष्ण आदि हमारी पहचान है| ऐसे भक्तिमय वातावरण में ही यह संभव हो सका है कि हमारे समाज में संत शिरोमणि श्री नामदेव जी महाराज जैसे महान संत हुए हैं | इसके कई प्रमाण गोस्वामीजीनाभा कृत भक्तमाल, श्री प्रिय दास जी प्रणीत टीका, आदि हैं| सिखों के धार्मिक ग्रंथ "गुरु ग्रंथ साहिब" में संत शिरोमणि नामदेव जी महाराज द्वारा रचित 61 अभंग (पद) उपलब्ध हैं | आज पांचो खापें नामदेव जी के नाम से अपने आप को जोड़ने लगी हैं|

संत नामदेव की जाति -

संत शिरोमणि श्री नामदेवजी का जन्म " महाराष्ट्र में "26 अक्टूबर, 1270 , कार्तिक शुक्ल एकादशी संवत् 1327 , रविवार" को हुआ था तथा 3 जुलाई सन 1350 शनिवार आषाढ़ कृष्णा त्रयोदशी विक्रम संवत 1407 को सपरिवार संजीवन समाधि लेकर मोक्ष प्राप्त किया । ।नामदेवजी के जीवन काल में गुलाम वंश (1206-1290),खिलजी वंश (1290 to 1320)एवं तुग़लक़ वंश (1321–1414) का शासन रहा |फिरोज़ शाह तुग़लक़ (1351से 1388)ने अपनी हुकूमत के दौरान कई हिंदुओं को मुस्लिम धर्म अपनाने पर मजबूर किया। फिरोज़ शाह

तुग़लक़ को कुछ इतिहासकार धर्मांध एवं असहिष्णु शासक मानते हैं|उसने हिन्दू जनता को जिम्मी(इस्लाम धर्म स्वीकार न करने वाले) कहा और हिन्दू ब्राह्मणों पर जजिया कर लगाया। डॉ॰ आर.सी. मजूमदार ने कहा है कि , "फिरोज़ शाह इस युग का सबसे धर्मान्ध एवं इस क्षेत्र में सिकंदर लोदी एवं औरंगज़ेब का अग्रगामी था।' इसी काल में भारत में भक्ति आंदोलन (800-1700) भी चला संत नामदेव ने अपने भक्ति आंदोलन की सहायता से हिंदुओं को नैतिक समर्थन प्रदान किया तथा अपने चमत्कारों से मुस्लिम शासकों को हिंदुओं पर किए जा रहे अत्याचारों पर रोक लगाने का

प्रयत्न किया |नामदेव जी का जन्म जिस घर में हुआ था वहां छपाई व सिलाई दोनों कार्य होते थे, निश्चित रूप इस कार्य को करने वाले को हीनता की दृष्टि देखते होंगे इसीलिए उन्होंने अपनी रचना में लिखा है-

"हसत खेलत तेरे देहुरे आया |
भक्ति करत नामा पकरि उठाया
हीनडी जाति मेरी आदम राइया,
छीपे के जन्म काहे कउ आइया" |

नामदेवजी ने अपने जातीय व्यवसाय के बारे में लिखा है-

" मन मेरा सुई, तन मेरा डोरा,
खेचर जी के चरण पर नाम सीपी लागा"

इससे सिद्ध होता है कि नामदेवजी छीपा-दजी समाज के ही हैं | उनके जन्म के बाद समाज ने 750 वर्ष की विकास यात्रा तय कर ली |इसका सुखद परिणाम यह हुआ कि अब अधिकांश स्व-जाति समूह अपने आप को संत नामदेव से जोडने लग गए |

समाज के अन्य घटक /खांपे : उपर्युक्त पांचों खांपो के अलावा भारत में संत नामदेव की भक्ति ,धर्म परिवर्तन व अन्य कारणों से छीपा व दर्जी समाज के साथ निम्न समूह जुड़ गए |

1.सिख छीपा(छिम्बा):

सिखों के धार्मिक ग्रंथ "गुरु ग्रंथ साहिब" में संत शिरोमणि नामदेव जी महाराज द्वारा रचित 61 अभंग (पद) उपलब्ध हैं |नामदेवजी का पंजाब में भी कार्य क्षेत्र रहा है ,उनसे प्रभावित होकर कई सिख बंधु नामदेवजी के भक्त हो गए |पंजाब में वे अपने आप को **छिम्बा** लिखते हैं तथा रंगाई छपाई के कार्य से जुड़े रहे |

2.मेरु /दर्जी /छिपोलू(meru or darjii or chippollu):

तेलंगाना प्रांत में सिलाई/छपाई कार्य करने वालों को मेरु/दर्जी /छिपोलू कहा जाता है |

हैदराबाद समाज की कल्याणकारी गतिविधियां **मेरु कला समकक्षमा संगम** द्वारा संचालित है |ये शैव भक्त हैं ,नामदेवजी को नहीं मानते |

3.शिंपी:- महाराष्ट्र में छीपा समाज " **शिंपी** "नाम से जाना जाता है जिसका कपड़े, सिलाई, रंगाई, फैशन डिजाइनिंग व्यवसाय से संबंध है। **शिंपी** को महाराष्ट्र में अन्य पिछड़ा वर्ग की श्रेणी में वर्गीकृत किया गया है। शिंपी की भी महाराष्ट्र में कई श्रेणिया हैं जैसे - मराठा

शिम्पी, नामदेव शिम्पी, सैतवाल शिम्पी, रंगारी शिम्पी, मेरु क्षत्रिय शिम्पी, क्षत्रिय अहिर शिम्पी, वैष्णव शिम्पी, भावसार शिम्पी।

वे पूरे भारत में भी मौजूद हैं और उत्तर भारत, कर्नाटक में खत्री और दक्षिण भारत में मेरु / छिप्पोलु, गुजरात और राजस्थान में भावसार,छीपा ,टाक छीपा जैसे विभिन्न नामों से जाने जाते हैं।

4.कोकुत्स्थ:- काकुत्स्थ क्षत्रिय समाज अपने आप को अयोध्या के इक्ष्वाकु वंश से जोड़ते हैं एवं महाराज पुरंजय के वंशज मानते हैं| वे अपने आप को सूचीकार(दर्जी) कहते हैं| इस समाज का वर्ण परिवर्तन के पीछे पौराणिक आख्यान लगभग छीपा समाज जैसा ही है| यह समाज भी संत नामदेव को अपने समाज का मानते हैं| काकुत्स्थ क्षत्रिय समाज की सामाजिक गतिविधियों का संचालन 1895 में बनी काकुतस्थ क्षत्रिय महासभा करती है|
छीपा /छीपी जाति की तरह काकुत्स्थ जाति भी उत्तर प्रदेश में ओबीसी श्रेणी में आती है|

5.रोहिला टांक क्षत्रिय :-

"रोहिला-टांक क्षत्रियों के क्रमबद्ध इतिहास" का गहन अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि रोहिला -टांक क्षत्रिय समाज स्वयं अपने आप से आज तक अनभिज्ञ रहा है । समाज का आम व्यक्ति आज तक यही जानता रहा है कि रोहिला केवल मुसलमान पठान ही थे और उन्हीं के द्वारा कठेहर प्रदेश का नाम रुहेल खंड के नाम से विख्यात हुआ है ।
कालांतर में सभी क्षत्रिय वंशों में रोहिला शाखा सम्मिलित रही है और उसका अलग अस्तित्व रहा है । जैसे कि पृथ्वी राज रासौ में 36कुलों की गणना और 36शाही खानदानों तथा वर्तमान के आधार पर 36राजवंश से यह प्रमाणित हो जाता है कि रोहिला शाखा भी राजवंशों में सम्मिलित रही है ।
पृथ्वीराज चौहान के परममित्र और कवि चन्द्रबरदाई ने अन्य वर्गों के राजपूतों के साथ-साथ रोहिला क्षत्रियों का वर्णन किया है जो पृथ्वीराज के दरबार के प्रमुख सौ वीरों में स्थान प्राप्त थे जिसका उल्लेख इस प्रकार किया गया है :

वज्जिथ जयचन्द चलऊ दिल्ली सुर पेषण,
चन्द वर दिया साधि बहुत सामन्त सूर धन,
चहूं प्रान राठवर जाति पुंडेर गुहिला,
बड़ गूजर पामार कुरभ जांगरा रोहिला ।
इत्ते सवहित भूपति चलऊ उड़ी रेन किन्नऊ नभऊं
एकु-एकु लष्य लष्य बह चले साथ राजपूत सऊ ।।

प्राचीन काल में रोहिला क्षत्रियों का स्थान बहुत ऊंचा था जिसका विस्तृत वृतांत आइने-ए-अकबरी में किया गया है ।

कालांतर में राजा सहारन द्वारा इस्लाम धर्म ग्रहण करने के बाद टांकों में हीनता प्रविष्ट हो गई और आत्मग्लानि के कारण टांक लिखना बंद कर दिया । टांकों ने अपमानमय समझते हुए संपन्नता को त्याग कर गरीबी को अधिक महत्व दिया । इसके पश्चात टांक क्षत्रियों का नाम शाही राजपूत परिवारों से हटा दिया गया । अतः जिन टांक बंधुओं ने अपने मूल धर्म और संस्कृति की रक्षार्थ संपूर्ण सांसारिक सुखों को तिलांजलि दे दी । उस टांक क्षत्रिय जाति के वे वीर धन्य हैं ।

इस प्रकार रोहिला और टांक क्षत्रियों के प्राचीन व्यवहार को देखने से स्पष्ट हो जाता है कि **उन्होंने अपने आप को खान-पान, विवाह संबंध, कर्मकांड आदि के मामले में अन्य किसी के साथ नहीं जोड़ा, उन्होंने ये कार्य केवल धर्मांतरण से बचे अपने समुदाय दर्जी, छींपी समाज के मनुष्यों में ही किया** । अतः दूसरी जाति के रक्त से मिलकर अपने रुधिर में कोई विकार उत्पन्न नहीं होने दिया । इस पवित्रता की दशा में इनका क्षत्रियपन ज्यों का त्यों चला आ रहा है।

आधुनिक काल अर्थात वर्तमान समय

कालांतर में मुसलमानों के आक्रमण और उनके द्वारा किए गए अत्याचार के कारण बहुत सारे हिन्दू रोहिला-टांक क्षत्रिय बचकर कही छिप गए और उन्होंने अपने भरण-पोषण तथा अस्मिता को अक्षुण्ण बनाए रखने के लिए छोटे-छोटे कुटीर उद्योग, समाज के हितार्थ छोटे कार्य अपना लिए जिसके चलते शेष हिन्दू-रोहिला-टांक क्षत्रिय ने दर्जी, कपड़ों की छपाई-रंगाई इत्यादि कारोबार को अपना लिया । इसके साथ छोटे-छोटे गांवों, कस्बों, शहरों में इस व्यवसाय-कारोबार के नाम पर ही जांत-पांत स्थापित होती चली गई और वे अब पूरी तरह से प्रचलन में है । उसी जाति के अनुसार हिन्दू समाज के लोगों की एक बड़ी पहचान बन चुकी है जिसको कोई भी नहीं नकार सकता है और न ही कोई अपने आपको छिपा सकता है।

इसी कड़ी में दिल्ली, हरियाणा, राजस्थान, पंजाब, मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश के कुछ क्षेत्रों में से रोहिला-टांक समाज के मूल निवासियों को अपने पूर्वजों से जो संस्कारवश पहचान मिली है उसे वे बिल्कुल भी छोड़ने के लिए तैयार नहीं है ।

रोहिले- राजपूत प्राचीन काल से ही सीमा- प्रांत, मध्य देश (गंगा- यमुना का दोआब), पंजाब, काश्मीर, गुजरात, राजस्थान, मध्य प्रदेश में शासन करते रहे हैं । जबकि मुस्लिम-रोहिला साम्राज्य अठारहवी शताब्दी में इस्लामिक दबाव के पश्चात् स्थापित हुआ. मुसलमानों ने इसे उर्दू में "रूहेलखण्ड" कहा ।

1702 से 1720 ई तक रोहिलखण्ड में रोहिले राजपूतो का शासन था. जिसकी राजधानी बरेली

थी ।

रोहिल्ला उपाधि – शूरवीर, अदम्य – साहसी विशेष युद्ध कला में प्रवीण, उच्च कुलीन सेनानायको, और सामन्तों को उनके गुणों के अनुरूप क्षत्रिय वीरों को तदर्थ उपाधि से विभूषित किया जाता था – जैसे – रावत – महारावत, राणा, महाराणा, ठाकुर, नेगी, रावल, रहकवाल, रोहिल्ला, समरलछन्द, लखमीर,(एक लाख का नायक) आदि।

चहूँप्रान, राठवर, जाति पुण्डीर गुहिल्ला । बडगूजर पामार, कुरभ, जागरा, रोहिल्ला

"पृथ्वीराज रासौ" की इस कविता से स्पष्ट है , कि – प्राचीन – काल में रोहिला- क्षत्रियों का स्थान बहुत ऊँचा था। रोहिला रोहिल्ल आदि शब्द राजपुत्रों अथवा क्षत्रियों के ही द्योतक थे । इस कविता की प्रमाणिकता "आइने अकबरी", 'सुरजन चरित' भी सिद्ध करते हैं । युद्ध में कमानी की तरह (रोह चढ़ाई करके) शत्रु सेना को छिन्न – भिन्न करने वाले को रहकवाल, रावल, रोहिल्ला, महाभट्ट कहा गया है।

महाराज पृथ्वीराज चौहान की सेना में पांच गोत्रों के रावल थे –

रावल – रोहिला

रावल – सिन्धु

रावल – घिलौत (गहलौत)

रावल – काशव या कश्यप

रावल – बलदया बल्द

मुग़ल बादशाह अकबर ने भी बहादुरी की रोहिला उपाधि को यथावत बनाए रखा| जब अकबर की सेना दूसरे राज्यों को जीत कर आती थी तो अकबर अपनी सेना के सरदारों को एवं बहादुर जवानों को बहादुरी के पदक (ख़िताब,उपाधि) देता था। एक बार जब महाराणा मानसिंह काबुल जीतकर वापिस आए तो अकबर ने उसके बाइस राजपूत सरदारों को यह ख़िताब दिया | **सौजन्य से "अखिल विश्व नामदेव क्षत्रिय महासभा"**

6. पीपा क्षत्रिय दर्जी -

पीपा क्षत्रिय दर्जी मूलतः राजस्थान तथा भारत के अन्य राज्यों जैसे गुजरात और मध्य प्रदेश इत्यादि के निवासी हैं। पीपा क्षत्रिय हिन्दू धर्म के क्षत्रिय वर्ण की शाखा हैं। पीपा के प्रमुख चार वंश : सूर्यवंश, चन्द्रवंश, अग्निवंश एवं ऋषिवंश हैं, जो विभिन्न उपखण्डों : पंवार, सोलंकी, परमार, दहिया, चौहान, गोयल, राकेचा, परिहार और टाक इत्यादि में विभाजित हैं। इनकी मातृभाषा से क्षेत्रानुसार : मारवाड़ी, मेवाड़ी, वागड़ी और गुजराती हैं। हिन्दी भाषा सभी को जोड़ती है।वे मुख्य रूप से शाकाहारी जीवन यापन करते हैं, परन्तु कुछ क्षेत्रों में गैर-शाकाहारी भी। जीवन निर्वहन हेतु इनका **पारिवारिक व्यवसाय सिलाई** है जो कि एक अहिंसक कार्य है लेकिन इन दिनों सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों में जैसे कि चिकित्सा, अभियान्त्रिकी एवं प्रबंधन में भी कार्यरत हैं।

राजा राव प्रताप सिंह खींची चौहान को जगतगुरु रामानंद जी ने अपना शिष्य बनाया था तब रामानंद जी ने एक श्लोक दिया उसके अनुसार उनका नाम **संत पीपा** हो गया। यह नाम उनके अनुयायियों द्वारा कहा गया हैं संत पीपा राजपाट त्याग करके धर्म की रक्षा के लिए संत बन गए थे और पीपाजी के अनुयाई राजपूत राजाओं ने पीपाजी महाराज को अपना गुरु माना वही से ये समुदाय आज विख्यात है |

पीपा क्षत्रिय के नाम से यह समुदाय राजपूतो का अहिंसक समुदाय है| धर्म की रक्षा के लिए राजाओं ने राजपाट को त्याग कर अहिंसक जीवन यापन करने का मार्ग चुना और आज भी यह समुदाय किसी भी प्रकार की हिंसा का कार्य नहीं करता है| इस समुदाय का , अहिसंक राजपूत समुदाय , शुद्ध रूप से राजपूत समाज कहा जाता है एवं यह समाज शुद्ध रूप क्षत्रिय है।

दर्जी समुदाय के लोग संत पीपा जी को अपना आराध्य देव मानते हैं।

समदड़ी कस्बे में संत पीपा का एक विशाल मंदिर बना हुआ है, जहाँ हर वर्ष विशाल मेला लगता है। इसके अतिरिक्त गागरोन(झालावाड़) एवं मसुरिया (जोधपुर) में भी इनकी स्मृति में मेलों का आयोजन होता है। संत पीपा मध्यकालीन राजस्थान में भक्ति आन्दोलन के प्रमुख संतों में से एक थे। वे देवी दुर्गा के भक्त बन गए थे। बाद के समय में उन्होंने रामानंद जी को अपना गुरु मान लिया। फिर वे अपनी पत्नी सीता के साथ राजस्थान के टोडानगर में एक मंदिर में रहने लगे थे।

संत पीपा जी का जन्म 1426 ईसवी में राजस्थान में कोटा से 45 मील पूर्व दिशा में गाग्रौनगढ़ रियासत में हुआ था।

पीपाजी ने रामानंद से दीक्षा लेकर राजस्थान में निर्गुण भक्ति परम्परा का सूत्रपात किया था।संत पीपाजी ने "चिंतावानी जोग" नामक गुटका की रचना की थी, जिसका लिपि काल संवत 1868 दिया गया है।

पीपा जी ने अपना अंतिम समय टोंक के टोडा गाँव में बिताया था और वहीं पर चैत्र माह की कृष्ण पक्ष नवमी को इनका निधन हुआ, जो आज भी'पीपाजी की गुफ़ा' के नाम से प्रसिद्ध है। गुरु नानक देव ने इनकी रचना इनके पोते अनंतदास के पास से टोडा नगर में ही प्राप्त की थी। इस बात का प्रमाण अनंतदास द्वारा लिखित'परचई' के पच्चीसवें प्रसंग से भी मिलता है। इस रचना को बाद में गुरु अर्जुन देव ने 'गुरु ग्रंथ साहिब' में जगह दी थी।

7.मुस्लिम छीपा/दर्जी - भारत भूमि पर आक्रमण करने वाला प्रथम मुस्लिम आक्रांता मुहम्मद बिन कासिम था । वह अरब के खलीफा का नुमाइंदा था। वह 712 ईस्वी में भारत आया था। कासिम ने सिंध और पंजाब को जितने के बाद यहाँ भारी लूटपाट की और निर्दोष हिन्दू लोगों का नरसंहार किया व धर्मांतरण किया । मुहम्मद बिन कासिम के सिंध के राजा दाहिर को पराजित करने के बाद 9वी 10वी शताब्दी में मुस्लिम समुदाय के संपर्क में आने

तथा सूफी संतो से प्रभावित होकर इस्लाम स्वीकार किया। मोतीलाल बड़वा (भाट) के अनुसार 16 अप्रैल 1353 को दिल्ली सुल्तान फिरोज शाह तुगलक के समक्ष नागौर (राजस्थान)में 14 छीपा समाज के गोत्र वाले समाज बंधुओं (टांक ,मोलानी ,देवड़ा,चौहान ,भाटी आदि)ने सर्व प्रथम हिन्दू धर्म परिवर्तन कर इस्लाम धर्म स्वीकार किया तब से वे 16 अप्रैल को **छीपा दिवस** के रूप में मनाते हैं |राजस्थान में मुस्लिम छीपा महासभा नाम की संस्था कार्यरत है |अन्य प्रांतो में भी इनके संगठन हैं |

रंगरेज/नीलगर/लीलगर-

धर्म परिवर्तन के कारण समाज के रंगारा छीपा रंगरेज/नीलगर/लीलगर बन गए |

भारत प्राचीन काल से ही कृषि प्रधान देश है।हमारे देश में नील की खेती होती थी । नील को ही अंग्रेजी में इंडिगो कहा जाता है।रंगारा छीपा समाज द्वारा नील के पौधों को काट कर पानी की बडी होद में गलाया जाता था। पौधों के गल सड जाने के बाद होद में उतर कर हाथों से मथा जाता था, कचरा निकाल कर होद का पानी क्रमश:दूसरी तीसरी....होद में छोडकर पानी में घुली नील को नीचे बैठने/नितरने पर पानी को अगली होद में छोडा जाता था। नीचे नील के पौधों का सत मिलता उसे बट्टियों के रूप में सुखाकर नील तैयार की जाती थी,जो भारतीयो के कपडों की ही चमक नही पूरी दुनिया में भारत का नाम रोशन करने के साथ भारतीय जनता के खजाने में भी सोने की चमक बढाने का काम करती थी।चूंकि नील को अंग्रेजी में इंडिगो कहा जाता है। नील का व्यापार यूरोप के देशों से हमारे द्वारा किया जाता था। ।छीपा समाज तथा विशेष रूप से रंगारा छीपा समाज द्वारा जंगल से फूल और कुछ जडी बुटियो से अन्य रंग (वानस्पतिक रंग) बनाया जाता था।मुगलकाल में बलात धर्म परिवर्तन के कारण रंगारा छीपा रंगरेज बन गए | **रंगरेज** शब्द फारसी भाषा का है ।हमारा नील और रंगों का व्यापार पूरी दुनिया में हुआ करता था।इरान, इराकऔर मिश्र में भी हमारा व्यापार होता था। वहां के लोगों के द्वारा ही रंगारा छीपा समाज को रंगरेज कहा जाता था जिसका अर्थ कपडे रंगने वाले से होता है।धर्म परिवर्तन के बाद उन्हे **सब्बाग**(नील की खेती करने वाले) भी कहा जाता है।

रंगारा छीपा रंगाई के साथ बंधेज का काम भी करते थे |बंधेज में वे -1.चुनरी 2. मोठडा 3. पीलिया 4.पोमचा 5. मामापुरिया 6.घाट 7.लहरिया 8.पंतगिया आदि वस्त्रों को बंधेज के साथ रंगने(लूगडे, साडी, साफा, पगडी पर कई तरह के कच्चे-पक्के रंगना) का कार्य भी करते थे | सावन के महीने में लहरिया की तो बात ही निराली होती थी।लहरिया रंगते रंगते /सुखाते(हाथ में सुखाते) समय तो पानी की बरसात होने लगती थी। बसंत के मौसम में बसंती छाटना(कपडे को पीला रंग कर गहरे लाल/गुलाबी रंग के छीटे देकर बसंती कपडा) रंगा जाता था।धर्म परिवर्तन के बाद रंगरेज हमें (उनके पूर्वज)

मुशरिक कह कर पुकारते थे | मुशरिक शब्द "शिर्क" से बना है | शिर्क का मतलब है "साझीदार(शरिक) बनाना" | जो अल्लाह के साथ किसी और को साझीदार बनाता है उसे 'मुशरिक' कहा जाता है |शिर्क को इस्लाम मे सबसे बड़ा पाप कहा गया है|शिर्क मुख्यतः दो तरीके का होता है प्रथम - एक से ज्यादा अल्लाह/ ईश्वर/ गॉड मे विश्वास करना तथा द्वितीय अल्लाह के गुण(सिफत) में किसी और को साझीदार बनाना| मूर्तिपूजक अक्सर अल्लाह के गुण में किसी महापुरुष, जानवर, आकृति को साझीदार बना लेता है | उदाहरण के लिये कई मूर्तिपूजक अल्लाह के सिवा किसी और को धन देनेवाला, शक्ति देनेवाला, कण-कण मे समाया हुआ मान लेता है| जबकि सच्चाई यह है कि एक अल्लाह के सिवा कोई धन, शक्ति देनेवाला नही है और ना ही कोई हर जगह मौजूद है | यही कारण है कि मुशरिक शब्द का अनुवाद कई बार 'मूर्तिपूजक' किया जाता है |
मुसलमान होने के बाद से ही मुशरिको से अलग रीति रिवाज,शादी-विवाह,खानपान,रहन सहन,नामकरण, मौत , मय्यत, त्यौंहार , पहनावे आदि में परिवर्तन आता गया।
भारत की आजादी के समय बहेलियम रंगरेज समुदाय के बहुत से लोग दूसरे देशो में चले गए थे जो अब वहां पर मुहाजिरो में अग्रणी भूमिका अदा करने वाले हैं।

राजस्थान के रंगरेजो में कुछ दावा करते हैं कि मुहम्मद गौरी के समय वे दिल्ली से राजस्थान में आए थे।रंगरेजो का एक गौत्र गौरी भी है।यहां राजस्थान में रंगरेज जयपुर, सीकर, सवाई माधोपुर और अलवर जिले में बहुतायत में पाए जाते हैं।
रंगरेज समुदाय के कई गोत्र है।गौरी चौहान,मंडवारिया, खोखर,भट्टी, बगाडिया,सिंघानिया, सोलंकी, आरबी ,बहेलियम आदि |रंगरेज समुदाय मध्य एशिया में पाया जाता है।इसके अधिक तर लोग पूरे भारत में पाए जाते हैं।भारत की आजादी के बाद कुछ लोग पाकिस्तान में चले गए।वहां कराची में जाकर बसे है।खासतौर पर वहां मुहाजिर(पाकिस्तान में उन लोगों को **मुहाजिर** या **मोहाजिर** कहते हैं जो भारत के विभाजन के बाद वर्तमान भारत के किसी भाग से अपना घरबार छोड़कर वर्तमान पाकिस्तान के किसी भाग में आकर बस गये) में खास है। इसके अलावा बंगला देश और टर्की में भी रंगरेज पाए जाते हैं।
भारत में दिल्ली, बिहार,राजस्थान,मध्य प्रदेश, गुजरात,महाराष्ट्रऔर दक्षिण भारत में भी रंगरेज- छीपा पाए जाते हैं।

वर्तमान स्थिति

आज देश में उपर्युक्त सभी खांपो का अस्तित्व तो हैं परंतु रंगाई ,छपाई ,सिलाई ,बंधाई (बंधेज) कार्य समाज के बहुत कम बंधु करते हैं| हम अपने मूल कर्म को छोड़ कर अन्य कर्मों से जुड़ गए इसका अर्थ यह नहीं है कि ये सभी व्यवसाय बंद हो गए हैं ,हमारे मूल व्यवसाय आज भी

प्रचलित है |अन्य लोग तकनीकी परिवर्तन के साथ उनको अपनाए हुये हैं तथा अच्छी आय अर्जित कर रहे हैं |सभी समाज बंधु अपनी अपनी खाँप से प्रेम करते हैं तथा उसके विकास के प्रति चिंतित भी हैं अतः यदि सभी खांपे एक मंच पर आती है तो राजनीतिक दृष्टि से यह भारत का सबसे मजबूत एवं सुदृढ़ समाज होगा| इसके लिए जरूरी यह है कि सभी खापे अपने अपने ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर एक स्थान पर विचार-विमर्श के लिए एकत्र हों तथा जिन आधारों पर एकजुटता हो सकती है उनका प्राथमिकता से निर्धारण हो | इस विषय पर शोध आगे बढ़े तथा सर्व समाज के कॉमन बिंदुओं पर कार्यवाही शुरू की जाए|अलग अलग स्त्रोतों से इन सभी खांपो से संबंधित साहित्य का संकलन किया जाए| ऐसी पुण्यमयी , कर्म-धर्म प्रधान जाति में उत्पन्न होना परम सौभाग्य, गौरव तथा सम्मान का विषय है| इस जाति को सामाजिक ,आर्थिक एवं राजनीतिक दृष्टि से ऊंचा उठाना हम सब का पुनीत कर्तव्य है |